लिपि का विकास एवं हिन्दी

हिन्दीः विधि संदर्भ
पृष्ट सं0– 14 से 26
ISBN 978-93-93164-17-9

डॉ० शीशम साहू
गोपीनाथ सिंह महिला महाविद्यालय
हिन्दी विभाग
मो0 नं0– 9955156475

आदिम मनुष्यों ने अपने भावों और विचारों को व्यक्त करने के लिए भाषा का अविश्कार किया इस भाषा के माध्यम से वह अपने विचारों को व्यक्त तो कर लेता था पर उन्हें स्थायित्व नहीं प्रदान कर सकता था, किन्तु भाषा को स्थायित्व प्रदान करने के लिए उसे लिपिबद्ध करना आवश्यक था इसलिए उसने भाषा को व्यक्त करने के लिए कुछ चिन्हों का आविष्कार किया जिसे लिपि कहा जाता है। पहले–पहल उसने अपने विचारों को संकेतों, लकीरों और चिन्हों द्वारा व्यक्त करता था अतः इन्हें ही लिपियों का मूल रूप कहना चाहिए। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि 10,000 ई0 पूर्व लिपियाँ धीर–धीरे विकसित होती रही। लिपियों के विकास का यह रूप इस प्रकार था।

1. प्रतीकात्मक लिपि
2. सूत्र लिपि
3. चित्र लिपि
4. भावमूलक लिपि
5. भावध्वनि मूलक लिपि
6. ध्वनि मूलक लिपि

1. **प्रतीकात्मक लिपि** :– आदिम मनुष्य सबसे पहले अपने विचारों को प्रतीकों के माध्यम से सीखा होगा और विशिष्ट प्रतीकात्मक चिन्हों के माध्यम से अपने विचारों को व्यक्त किया होगा। उदाहरणार्थ, फटे पत्र को देखकर किसी की मृत्यु या अशुभता को पहचाना, हल्दी छिड़के पत्र को देखकर मांगलिक कार्य या शुभता को पहचानना, लाल झंडो को देखकर गाड़ी रोकने और हरी झेडी को देखकर गाड़ी चलाने का संकेत प्रतीकात्मक लिपि का ही अवशेष है।

2. **सूत्र लिपि** :– सूत्र अर्थात धागा। आदिम मनुष्य सूत्र को डंडे में बांध–बांध कर अपने विचारों को व्यक्त किया करता था। अपने विचारों के अनुसार वह रस्सियों को मोटी और पतली भी कर लेता था और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें रंग भी लिया करता था। ब्राहम्णों की जनेऊ के तीन धागे और गाँठ बांधने की प्रक्रिया इसका उदाहरण है। चीन, तिब्बत और जापान आदि में यह लिपि अब भी पायी जाती है।

3. **चित्र लिपि** :– चित्र लिपि के विकास के परिणाम स्वरूप आदिम मनुष्यों ने चित्र भी बनाना सिख लिया जिसे चित्र लिपि कहते है। इसके उदाहरण यूनान, पूर्तगाल, साइबेरिया, मिश्र, सीरिया, ग्रेट ब्रिटेन आदि कई देशों में मिले है। संभवतः इसके प्रयोग करने वाले लोग अधिक थे।

4. **भाव मूलक लिपि** :– चित्र लिपि का विकसित अवस्था भाव मूलक लिपि है। इसमें चित्र बनाकर मनोभाव को दिखलाना भी विशेषता था। उदाहरणार्थ आँख में आँसू दिखलाना दुःखी होने का भाव प्रदर्शित करता है।

5. **भावध्वनि मूलक लिपि** :– यह चित्र लिपि का और अधिक विकसित रूप कही जायेगी। इसके संकेत भावों और ध्वनियों पर आधारित थे। मिश्री और हिन्दी लिपियाँ इसी कोटि की थी।

6. **ध्वनि मूलक लिपि** :– इस लिपि में भावों को ग्रहण करके उसकी ध्वनियों को प्रकट किया जाता था। इसके दो भेद थें :–

1. अक्षरात्मक लिपि और 2. वर्णनात्मक लिपि

अक्षरात्मक लिपि में संकेतो को अक्षर के माध्यम से व्यक्त किया जाता था वर्णो के माध्यम से नहीं। इसमें व्यंजनों के लिए दो ध्वनियॉ प्रयुक्त होती थी।
जैसे क में क् + अ।

वर्णात्मक लिपि में एक ही संकेत होता है रोमन लिपि ऐसी ही लिपि है।

अपने देश भारत के संदर्भ में यदि हम दृष्टि डालें तो हम देंखतें हैं कि यहाँ लेखन कला का विकास प्राचीन काल से ही होता चला आ रहा है। बौद्ध ग्रंथों में 400ई0 पूर्व के लेखन ज्ञान की प्रशंसा की गयी है। ब्राहम्ण ग्रंथों और वेदों में भी भारतीयों के लेखन काल का प्रमाण मिलता है। भारत में सड़कों पर मील के पत्थर गड़े थे जिस पर जन्म कुंडलियाँ छपी हुई थी।[1]

भारत में लेखन कला का ज्ञान प्राचीन काल से था उस समय हमारे देश में मुख्यतया तीन लिपियाँ थी।

1. सिन्धु घाटी की लिपि
2. खरोष्ठी लिपि
3. ब्राह्मी लिपि

1. **सिन्धु घाटी की लिपि** :– भारत में लिखने की कला का ज्ञान का प्रचीनतम रूप सिन्धु घाटी में (मांटगोमरी जिले के हड़प्पा तथा सिन्धु के लरकाना जिले के मोहन जोदड़ो में प्राप्त सीलों पर मिलें है। हेरास, लैण्डन, स्मिथ, गैंड तथा हण्टर ने इसे समझे और पढ़ने का प्रयास किया किन्तु अभी तक सफलता नहीं मिली है। सिन्धु घाटी की लिपि की उत्पति के विषय में प्रधान्तः तीन मत हैः–

   क. **द्रविड़ उत्पति** :– इस मत के समर्थको में एच० हेरास तथा जॉन मार्शल प्रधान है। इन लोगो के अनुसार सिन्धु घाटी की सभ्यता द्रविड़ो की थी और वे ही लोग इस लिपि के जनक तथा विकास करने वाले थें।

   ख. **सुमेरी लिपि** :– एल० ए० बैडले तथा डॉ० प्राणनाथ के अनुसार सिन्धु घाटी की लिपि सुमेरी लिपि से निकली है। बैडले के अनुसार सिन्धु घाटी में 4000ई० पूर्व में सुमेरी लोग थें और उन्हीं की भाषा और लिपि वहाँ प्रचलित थी।

ग. **आर्य या असुर** :– कुछ लोगों के अनुसार सिन्धु की घाटी में आर्य या असुर (जो जाति तथा संस्कृति में आर्यों से सम्बंद्ध थें।) रहते थे और इन्हीं लोगों ने इस लिपि का निर्माण किया।

2. **खरोष्ठी लिपि** :– सिन्धु घाटी की लिपि को थोड़ी देर के लिए छोड़ दिया जाय तो भारत के पुराने शिलालेखों और सिक्कों पर दो लिपियाँ ब्राह्मी और खरोष्ठी मिलती है। पर पुस्तकों में और अधिक लिपियों के नाम मिलते है। जैनों के पन्नवणासूत्र में 18 लिपियों एवं बौद्धों की संस्कृत पुस्तक 'ललित विस्तर' में 64 लिपियों के नाम मिलते हैं। इनमें ब्राह्मी और खरोष्ठी इन दो का ही आज पता है।

3. **ब्राह्मी लिपि** :– इसका प्रचीनतम नमूने बस्ती जिले में प्राप्त पिपराला के स्तूप में तथा अजमेर जिले के बडली ग्राम में शिलालेख में मिलें हैं। इसका समय 5वीं सदी ईसा पूर्व माना गया है इस लिपि के ब्राह्मी नाम पड़ने के संबंध में 3–4 मत है जिनमें दो मुख्य है। 1. एक के मतानुसार इस लिपि का प्रयोग इतने प्राचीन काल से होता आ रहा है कि लोगों को इसके निर्माता के बारे में कुछ ज्ञात नहीं। अतः विश्व की अन्य चीजों की भांति ब्रह्मा को इसका भी निर्माता मानतें रहते हैं और इसी आधार पर इसे ब्राह्मी कहा गया हैं, परन्तु चीनियों का कहना है कि ब्रह्म या ब्रह्मा नामक आचार्य ने इसे बनाया था इसलिए इसका नाम ब्राह्मी पड़ा। यही कारण है कि ब्राह्मी लिपि की उत्पति के प्रश्न को लेकर विद्वानों में बहुत विवाद होता आया है। एक के अनुसार ब्राह्मी लिपि विदेशी लिपि है तो दूसरे के अनुसार देशी। ब्राह्मी की उत्पति भारत कें हुई है इस वर्ग में कई मत है।

क. द्रविड़ीय उत्पति :– एडवर्ड थॉमस तथा कुछ अन्य विद्वानों का यह मत है कि ब्राह्मी लिपि के मूल अविष्कारक द्रविड़ थें। डॉ० राजबली पाण्डेय ने लिखा है कि द्रविड़ों का मूल स्थान उत्तर भारत न होकर दक्षिण भारत है, परन्तु ब्राह्मी लिपि के पुराने सभी शिलालेख उत्तर भारत में मिलें है। यदि इसके मूल आविष्कर्ता द्रविड़ होते तो इसकी सामग्री दक्षिण भारत में भी अवश्य मिलती। साथ ही उनका यह भी कहना है कि द्रविड़ भाषाओं में सबसे प्रचीन भाषाओं में सबसे प्राचीन भाषा तमिल है और उसमें विभिन्न वर्गों के केवल प्रथम एवं पंचम वर्ण ही उच्चरित होते है पर ब्राह्मी में पाँचों वर्ण मिलते है। अतः उत्तर भारतीयों ने ही इस लिपि को जन्म दिया तथा इसका विकास किया पर यह कार्य आर्यों द्रविड़ों या किसी अन्य जाति के द्वारा हुआ यह जानने के लिए आज हमारे पास कोई साधन नहीं है।

ब्राह्मी लिपि के कई क्षेत्रीय रूपान्तर है इनमें से एक उत्तरी भारत है तो दूसरा दक्षिणी भारत। यह लिपि भारत के बाहर भी गयी। वहाँ इसके रूपों में धीरे–धीरे कुछ भिन्नताओं का विकास हुआ। 350ई0 के बाद इसकी स्पष्ट रूप से दो शैलियाँ हो जाती हैं। उत्तरी शैली और दक्षिणी शैली।

क. **उत्तरी शैली (गुप्त लिपि)** :– गुप्त राजाओं के समय में इसका प्रचार होने के कारण इसका गुप्त लिपि नाम पड़ा। कुटिल लिपि– स्वरों एव मात्राओं की आकृति टेढ़ी या कुटिल होने के कारण इसे कुटिल लिपि कहा गया। प्राचीन नागरी या शारदा लिपियाँ इसी से निकली है।

ख. **प्राचीन नागरी लिपि** :– इसका प्रचार उत्तर भारत में 9वीं सदी के अंतिम चरण में मिलता है। यह मूलतः उत्तरी लिपि है पर दक्षिण भारत में भी कुछ स्थानों पर 8वीं सदी से यह मिलती है। दक्षिण में इसका नाम नागरी न होकर नंदि नागरी है। आधुनिक काल में नागरी या देवनागरी, गुजराती, राजस्थानी तथा महाराष्ट्री आदि लिपियाँ इस प्राचीन नागरी के ही पश्चिम रूप से विकसित हुईं है और इसके पूर्वी रूप से कैथी, मैथिली तथा बंगला आदि लिपियों का विकास हुआ।

ग. **शारदा लिपि** :– कश्मीर की अधिष्ठात्री देवी शारदा कही जाती है और इसी आधार पर कश्मीर को शारदा मंडल तथा वहॉ की लिपि को शारदा लिपि कहते हैं।

अतः स्पष्ट है कि ब्राह्मी की उत्तरी शैली से चौथी सदी में गुप्त लिपि तथा गुप्त लिपि से छठी सदी में कुटिल लिपि विकसित हुई। इस कुटिल लिपि से ही 8–9वीं सदी के लगभग नागरी के प्राचीन रूप का विकास हुआ जिसे प्राचीन नागरी कहतें हैं जिसका क्षेत्र उत्तर भारत है। इस नामकरण के पीछे अलग–अलग मत प्रचलित हैः–

1. गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा प्रयुक्त होने के कारण यह नागरी कहलाई।
2. प्रमुख रूप से नगरों में प्रचलित होने के कारण इसका नाम नागरी पड़ा।
3. कुछ लोगों के अनुसार ललित विस्तर उल्लिखत 'नाग' ही नागरी है अर्थात 'नाग' से 'नागर' का संबंध है तांत्रिक चिन्ह देवनागर से साम्य के कारण इसे देवनागरी और फिर नागरी कहा गया। 'देवनगर' अर्थात काशी में प्रचार के कारण यह देवनागरी कही गई। समग्रत नागरी की व्युत्पति संदिग्ध है। इस लिपि का प्रयोग हिन्दी के प्राकृत और अपभ्रंरा भाषाओं में किया जाता है।[2]

अंततः कहा जा सकता है कि हिन्दी जिस लिपि में लिखि जाती है उसे 'नागरी' या 'देवनागरी' लिपि कहा जाता है। अंग्रजी 'रोमन' लिपि में उर्दू 'फारसी' लिपि में तथा 'पंजाबी' गुरूमुखी लिपि में तथा ब्राह्मी लिपि से ही देवनागरी लिपि का विकास हुआ।

हिन्दी जिस भाषा धारा के विशिष्ट दैशिक और कालिक रूप का नाम है भारत में उसका प्राचीनतम रूप संस्कृत है। संस्कृत का काल मोटे रूप से 1500ई०पू० से 500 ई०पू० तक माना जाता है। इस काल में संस्कृत बोलचाल की भाषा थी। उस बोल चाल की भाषा का ही शिष्ट और मानक रूप संस्कृत वाड.ग्मय में प्रयुक्त हुआ है। संस्कृत भाषा के भी दो रूप मिलते हैः– **पहला**ः– वैदिक संस्कृत, जिसमें चारो वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिशद आदि ग्रंथ रचे गए जिसमें भाषा का रूप एक नहीं है। दूसरा लौकिक संस्कृत जिसमें बाल्मीकी, ब्यास, भास, अश्वघोष, कालिदास माघ आदि की रचनाएँ है। इस संस्कृत काल के अन्त तक परिनिष्ठित भाषा तो एक थी किन्तु तीन क्षेत्रीय बोलियाँ विकसित हो चली थी जिसे पश्चिमोत्तरी मध्यदेशी तथा पूर्वी नाम से अभिहित किया जा सकता है।

संस्कृत कालीन बोलाचाल की भाषा 500ई०पू० के बाद प्रवृतितः बदल गयी। जिसे 'पाली' (मागधी) की संज्ञा दी गयी। यह बौद्ध धर्म की भाषा है। बौद्ध साहित्य पाली में लिखा गया है। त्रिपिटक पाली में लिखे गए त्रिपिटको के नाम है सुत पिटक, विनय पिटक और अभिधम्म पिटक। पहली ई० तक आते–आते यह बोलचाल की भाषा और बदल गयी। 'प्राकृत' भाषा बोलचाल

की भाषा होने के कारण पंडितों में प्रचलित नहीं थी। संस्कृत नाटकों के अधम पात्र इस बोली का प्रयोग करते थें। जैन साहित्य प्राकृत भाषा में लिखा गया है। 'प्राकृत' से विभिन्न क्षेत्रीय 'अपभ्रंशों' का विकास हुआ। अपभ्रंश भाषा का काल मोटे रूप से 500ई०पूर्व से 1000 ई० तक है। अपभ्रंश के विभिन्न क्षेत्रीय रूप इस प्रकार है :–

शैरसेनी अपभ्रंश – यह मथुरा या शूरसेन जनपद की बोली थी इसे मध्यप्रदेश की बोली भी कहा गया है। इससे निकलने वाली आधुनिक भाषाएँ तथा उपभाषाएँ है :– पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, पहाड़ी और गुजराती।

पैशाची अपभ्रंश – यह उत्तर पश्चिम में कश्मीर के आस–पास की भाषा थी जिससे निकलने वाली उपभाषाएँ है – लहंदा और पैशाची।

ब्राचंड अपभ्रंश :– इससे सिन्धी नामक उपभाषा निकली है।

महाराष्ट्री अपभ्रंश :– इसका मूल स्थान महाराष्ट्र था और उपभाषा मराठी थी।

मगधी अपभ्रंश :– यह मगध के आस–पास की प्रचलित भाषा थी जिससे निकलने वाली उपभाषाएँ है बिहारी, बंगला, उड़िया और असमिया।

अर्धमागधी अपभ्रंश :– यह मगध और शूरसेन (मथुरा) के बीच के क्षेत्र की भाषा थी जिससे पूर्वी हिन्दी नामक अपभाषा का जन्म हुआ।

इसे इस प्रकार समझा जा सकता है:– वैदिक संस्कृत►संस्कृत►पाली►प्राकृत►अपभ्रंश►हिन्दी

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि हिन्दी भाषा का उद्‌भव अपभ्रंश के शोरसेनी, अर्धमागधी और मागधी रूपों से हुआ है जिसका क्षेत्र हिमाचल प्रदेश, पंजाब का कुछ भाग, हरियाणा, राजस्थान, दिल्ली, उतरांचल छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा बिहार है जिसे हिन्दी भाषी प्रदेश कहते हैं। इस पूरे क्षेत्र में हिन्दी की पाँच उपभाषाएँ है जिसके अन्तर्गत मुख्यतः 18 (अठारह) बोलियाँ है। जिसका विवरण इस प्रकार है।

उपभाषाएँ बोलियॉ

1. पश्चिमी हिन्दी :– खड़ी बोली (कौरवी), ब्रजभाषा, बुन्देली, हरियाणवी (बंगारू), कन्नौजी।
2. पूर्व हिन्दी :– अवधी, बधेली, छत्तीसगढ़ी।
3. राजस्थानी :– मारवाड़ी, जयपुरी, मेवाती, मालवी।
4. पहाड़ी :– गढ़वाली, कुमायुनी, नेपाली।
5. बिहारी :– मैथिली, मगही और भोजपुरी।[3]

विश्व में लगभग तीन हजार या उससे भी अधिक भाषाएँ बोली जाती है। इन भाषाओं की ध्वनियों, शब्दों, शब्द रचना, रूप तथा वाक्य रचना के तुलनात्मक अध्ययन से यह पता चलता है कि इन भाषाओं में काफी कुछ समान है। इनमें हिन्दी भाषा 'भारोपिय परिवार' की है। इस परिवार के एक ओर मुख्यतः भारत है तो दूसरी ओर यूरोप। इसी आधार पर इसे भारोपीय कहा जाता है। हिन्दी भारत के एक बहुत बड़े भूभाग की भाषा है और उसका काल विस्तार एक हजार ई० से लेकर आज तक का है।

इस महानदी से समय–समय पर शब्द तथा अनेक प्रयोगों के आधार पर कई शाखाएँ, उपशाखाएँ फूटती रही है जिनमें से मुख्य उर्दू, रेख्ता, रेख्ती, हिन्दवी है। उर्दू और हिन्दुस्तानी हिन्दी की ही दो जीवित शैलियाँ है। देहलवी और आगरी हिन्दी के ही दो स्थानीय रूप है।

हिन्दी का शब्द भंडार संस्कृत, प्राकृत अपभ्रंश से होते हुए विकसित हुआ है। आदिकालीन हिन्दी साहित्य का शब्द भंडार बहुत कुछ अपभ्रंश जैसा है थोड़ा सा अन्तर केवल यह है कि भक्ति आन्दोलन के प्रभाव से तत्सम और विदेशों के संपर्क से विदेशी शब्दों का प्रतिशत कुछ बढ़ गया। मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में सगुण भक्ति के कारण लोगों का ध्यान संस्कृत के धार्मिक साहित्य की ओर गया। अतः तत्सम शब्दों के प्रयोग में वृद्धि हुई। शब्द भंडार की दृष्टि से हिन्दी का आधुनिक काल अपने चरम उत्कर्ष पर था। हरिऔध का 'प्रियप्रवास' और निराला का 'तुलसीदास' इसका उर्ध्व बिन्दु है। इधर स्वतंत्रता के बाद हिन्दी सभी क्षेत्रों में प्रयुक्त होने के लिए संघर्ष कर रही है।[4] हिन्दी भाषा के विकास में इंटरनेट जनसंचार का योगदान सशक्त है। इंटरनेट एक ऐसा माध्यम है जो हिन्दी भाषा के विकास में अत्यन्त उपयोगी है। सन् 1990–91 में ही सरकार ने 'टेक्नोलॉजी' डेवलेप्मेन्ट ऑफ इंडियन लैंगवेज' नामक परियोजना शुरू की। इसी तरह इंटरनेट के द्वारा हिन्दी भाषा का विकास हो रहा है। आज हिन्दी के अनेक पोर्टल्स, ब्लॉग, सोशल नेटवर्किंग, ई–मेल भेजने और पाने की सुविधा इंटरनेट जनसंचार प्रणाली पर उपलब्ध है। इलेक्ट्रॉनिक्स मीडिया और पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी का विकास हो रहा है। आज हिन्दी पत्रकारिता के माध्यम से यह समाज को सजग कर रहा है। हिन्दी रेडियो, टेलीविजन, अखबार का माध्यम बनकर समाज का रूप रेखा बदलने में सक्षम हो रही है।[5]

हिन्दी देश की प्राचीन समृद्ध एवं महान भाषा होने के साथ ही हमारी राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा भी है। भारत की स्वतंत्रता के बाद 14 सितम्बर 1949 को संविधान सभा ने एक मत से यह निर्णय लिया कि हिन्दी की 'खड़ी बोली' ही भारत की राजभाषा होगी। इसीलिए हमलोग 14 सितम्बर को 'हिन्दी दिवस' मनाते है 26 जनवरी 1950 से यह संविधान देश में लागू हुआ किन्तु कुछ विरोध के कारण यह भी प्रावधान किया गया कि अंग्रेजी भाषा में भी केन्द्र एवं अहिन्दी भाशी प्रदेश अपना कामकाज तब तक कर सकती है जब तक हिन्दी पूरी तरह राजभाषा के रूप में स्वीकार्य नहीं हो जाती। केन्द्र सरकार के अतिरिक्त हिन्दी भाषी प्रदेशों में इसका प्रयोग स्वीकृत है। भारतीय संविधान में अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा विषयक प्रावधान है। संविधान के भाग '17' के अध्याय '1' की धारा 343(1) के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। अनुच्छेद 344 राष्ट्रपति द्वारा राज भाषा आयोग एवं समिति के गठन से सम्बन्धित है। अनुच्छेद 345, 346, 347 में प्रादेशिक भाषाओं संबंधी प्रावधान है। अनुच्छेद 348 में उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालय, संसद और विधान मंडलों में प्रस्तुत विधेयकों की भाषा के संबंध में विस्तार से प्रकाश डाला गया है। अनुच्छेद 349 में भाषा से संबंधित विधियों को अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया का वर्णन है। अनुच्छेद 350 में जनसाधारण की व्यथा के निवारण के लिए किसी पदाधिकारी या प्राधिकारी को यथा स्थिति संघ या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभिवेदन देने का प्रत्येक व्यक्ति को हक दिया गया है। अनुच्छेद 351 में भाषा के विकास के लिए निर्देश दिए गए है ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके।[6]

भारत बहुमुखी भाषी राष्ट्र है। विस्तृत भूभाग वाले इस राष्ट्र में कश्मीर से लेकर कन्या कुमारी तक और कच्छ से लेकर ब्रह्मपुत्र तक अनेक भाषाएँ एवं बोलियाँ बोली जाती है। अतः प्रश्न है कि इनमें

से किसे राष्ट्रभाषा के लिए अपेक्षित गुणों पर विचार कर लेना चाहिए और इसके बाद यह देखना चाहिए कि भारत की कौन सी भाषा में ये गुण सर्वाधिक मात्रा में है। उसी को राष्ट्रभाषा का सम्मान दिया जाना चाहिए। सामान्यतः ये गुण निम्नलिखित है।

1. राष्ट्रभाषा बहुसंख्यक लोगों द्वारा प्रयोग में लायी जाती है।
2. उसमें उच्च कोटि की साहित्य की रचना हुई हो।
3. उसका शब्द भंडार विस्तृत एवं समृद्ध हो।
4. वह व्यापक क्षेत्र में व्यवहृत हो।
5. उसका व्याकरण सरल एवं नियमबद्ध हो।
6. उसकी लिपि सुस्पष्ट एवं वैज्ञानिक हो।
7. वह राष्ट्रीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती हो।
8. वह भाषा राष्ट्रीय एकता में सहायक हो।

हिन्दी के अतिरिक्त अन्य किसी भाषा में ये गुण विद्यमान नहीं है। अतः कहा जा सकता है कि हिन्दी भाषा में राष्ट्रभाषा बनने की क्षमता विद्यमान है।

कोई भी भाषा तब और समृद्ध मानी जाती है जब उसका साहित्य भी समृद्ध हो। आदिकाल से अबतक हिन्दी के आचार्यों, सन्तों, कवियों, विद्वानों, लेखकों एवं हिन्दी प्रेमियों ने अपने उत्कृष्ट ग्रंथों, अद्वितीय रचनाओं एवं लेखों से हिन्दी को समृद्ध किया है। यदि हम आदिकालीन साहित्य पर दृष्टि डालें तों अनेक वीरगाथा परक रचनाओं के साथ–साथ रासो काव्य, नाथ साहित्य एवं सिद्ध साहित्य के दर्शन होते है। आदिकालीन अपभ्रंश साहित्य भी प्रचुर संख्या में उपलब्ध है। रासो काव्य परंपरा में पृथ्वीराज रासो, हम्मीर रासो जैसे प्रसिद्ध रचनाएँ है तो जैन साहित्य में भरतेश्वर बाहुबलीरास जैसे अनेकों जैन साहित्य उपलब्ध है। सिद्ध साहित्य में सरहपा, लुइपा, सबरपा, डोम्भिपा जैसे कवि उत्पन्न हुए तो अमीर खुसरों जैसे खड़ी बोली हिन्दी के कवि भी उत्पन्न हुए संदेश रासक, पउमचरिउ, रिठ्नेमि चरिउ, नाग कुमार चरिउ, महापुराण जैसे अपभ्रंश साहित्य रचे गए तो विद्यापति की विद्यापति पदावली कीर्तिलता एवं कीर्तिपताका जैसे रचनाएँ भी रची गयी।

इसी तरह भक्ति काल में ज्ञान मार्गी सन्त कवि एवं प्रेम मार्गी सूफी कवि उत्पन्न हुए तो रामाश्रयी एवं कृष्णा श्रयी शाखा के भक्ति परक कवि भी उत्पन्न हुए जिनका विपुल साहित्य भंडार उपलब्ध है।

ज्ञानमार्गी सन्त कवियों में कबीर का बीजक है तो रविदास की बानी, गुरू नानक के जपुजी, असा दीवार, रहिरास सोहिला तो दादू दयाल का हरडेवाजी, मलूक दास का ज्ञानबोध, रतनखान, भक्ति विवके सुखसागर, भक्त बच्छावली, बारहखड़ी, स्फुट पद, रामअवतार लीला, ब्रजलीला तथा ध्रुवचरित है तो सुन्दर दास का ज्ञान समुद्र और सुन्दर विलास प्रसिद्ध रचनाएँ है।

प्रेममार्गी सूफी कवियों में असाइयत का हंसावली है तो मुल्लादाउद का चन्दायन, कुतुबन का मृगावली है तो मल्लिक मुहम्मद जायसी का पदमावत, मंझन का मधुमालती है तो उसमान का चित्रावली, शेखनबी का ज्ञानदीप है तो नुर मुहम्मद का अनुराग बांसुरी ऐसे अनेक सूफी कवियों की रचनाओं से साहित्य भरा पड़ा है।

इस तरह यदि रामाश्रयी एवं कृष्णाश्रयी शाखा के कवियों पर दृष्टि डालें तो हमें असंख्य ग्रंथ मिलेंगे जो हिन्दी साहित्य संपदा को सुशोभित करते है। तुलसीदास ने पाँच बड़े ग्रंथों की रचना की है तो सात छोटे–छोटे ग्रंथों की भी रचना की हैं जिसमें रामचरित मानस उनकी प्रसिद्ध कृति है। राम काव्य परंपरा के अन्य कवियों में रामानन्द के रामरक्षा स्त्रोत है तो अग्रदास के ध्यान मंजरी, अष्टयाम, रामभजन मंजरी, उपासना बावनी, पदावली, हितोपदेश भाषा, ईश्वर दास के भरत मिलाप, अंगद पैज है तो केशवदास का रामचन्द्रिका प्राणचन्द चौहान का रामायण महानाटक है तो माधव दास चरण का रामरासो और अध्यात्म रामयण, हृदयराम का हन्नुमन्नाटक है तो लालदास का अवध विलास, इसी प्रकार अनेकानेक कवि है जो रामकाव्य परंपरा पर आधारित रचनाओं की सृष्टि की है।

कृश्णाश्रयी शाखा के कवियों में सूरदास का सूरसागर, सूरसारावली और साहित्य लहरी जैसे बड़े ग्रंथ है तो अनेकानेक छोटे ग्रंथ भी है। नन्ददास के अनेकार्थ मंजरी, रसमंजरी, रूपमंजरी, बिरह मंजरी, मानमंजरी, श्याम सगाई, प्रेमबारह खड़ी, सुदामा चरित, रूक्मिणी मंगल, भंवरगीत, रास पंचाध्यायी, सिद्धांत पंचाध्यायी, गोवर्धन लीला, नन्ददास पदावली जैसे ग्रंथों से साहित्य कोश भरा पड़ा है। मीरा का नरसी जी का मायरा, गीत गाविंद टीका, राग सोरठा के पद है तो रसखान के प्रेमवाटिका, दानलीला, संकलन सुजान, अश्टयाम जैसे प्रसिद्ध रचनाएँ है।

रीतिकाल के साहित्य संपदा पर दृष्टि डालें तो हमें असंख्य स्मरीणय ग्रंथ मिलेंगे इस काल में कई प्रकार की रचनाएँ मिलती हैः–

1. रीतिबद्ध
2. रीतिमुक्त एवं
3. रीति सिद्ध

श्रृंगाररिक रचनाओं में संयोग श्रृंगार एवं विप्रलंभ श्रृंगार कुछ वीरगाथात्मक तो कुछ भक्ति परक।

आधुनिक काल में भरतेन्दु युग, द्विवेदी युग, छायावाद युग, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता प्रबंधकाव्य, मुक्तक काव्य, खण्ड काव्य आदि काव्य रचनाओं का प्रचुर भंडार है तो गद्य साहित्य में नाटक, एकांकी, उपन्यास कहानी, निबन्ध, समालोचना, जीवनी साहित्य, आत्मकथा, यात्रावृत, संस्मरण तथा रेखा चित्र, रिपोर्ताज पत्र पत्रिकायें आदि से साहित्य भरे पड़े है।

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में हिन्दी भाशा ने अहम भूमिका निभाई क्योंकि भाशा विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम होती है। भाशा जितनी सुबोध, सहज और सरल होगी भाव संप्रेशण उतना ही सफल और सशक्त होगा। इसीलिए कहा गया है 'साहित्य समाज का दर्पण' होता है भारतेन्दु युगीन कवियों ने भारतीय इतिहास के गौरवशाली पृश्ठों की समृति तो अनेक बार दिलाई पर उनकी राश्ट्रीय भावना यहीं तक सीमित नहीं रही बल्कि सामाजिक जीवन की उपेक्षा न कर जनता की समस्याओं के निरूपण की ओर पहली बार व्यापक रूप में ध्यान दिया। भारतेन्दु जी ने हिन्दी साहित्य को नवीन मार्ग दिखाया। देशहित और समाज हित की भावना का समावेश सर्वप्रथम भारतेन्दु जी के साहित्यिक रचनाओं में हुआ। 'हम उत्तम भारत देश' (राधाकृश्ण गोस्वामी) और धन्य भूमि भारत सब रतनानि की उपजावनि (प्रेमधन) आदि काव्य पंक्तियाँ इसी तथ्य को उजागर करती है। देश के उत्कर्श–अपकर्श के लिए उत्तरदायी परिस्थितियाँ पर प्रकाश डालकर इस युग के कवियों ने जनमानस में राष्ट्रीय भावना के

बीज वपन का महत्वूपर्ण कार्य किया। देश भक्ति की जो भावना बाद में मैथिलीशरण गुप्त कृत 'भारत–भारती' में लक्षित हुई।[7]

हिन्दी ने भाशा व्याकरण साहित्य, कला, संगीत सभी माध्यम में अपनी उपयोगिता प्रासांगिकता एवं वर्चस्व कायम किया है। भारत और अन्य देशों जैसे बांग्लादेश, भूटान, नेपाल, तिब्बत, म्यांमार, अफगानिस्तान, में भी लाखों लोग हिन्दी बोलतें हैं और समझते हैं। फिजी, सुरिनाम, गुयाना त्रिनिदाद जैसे देश तो हिन्दी भाशियों द्वारा ही बसाये गए हैं। आज हिन्दी विश्व भाशा बनने की ओर अग्रसर है। उससे यह संभावनाएँ जता सकते हैं कि शीघ्र ही हिन्दी को संयुक्त राश्ट्र संघ की अधिकारिक भाशा में शामिल कर लिया जायेगा।

संदर्भ सूची

1. हिन्दी भाषा और लिपि का इतिहास
   डॉ० राम नरेश मिश्र, ग्रीन लीफ पब्लिकेशन
   पृश्ठ सं0 :– 57 से 59
2. हिन्दी भाषा का इतिहास
   डॉ० भोलानाथ तिवारी, वाणी प्रकाशन (नयी दिल्ली)
   पृश्ठ सं0 :– 327 से 338
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास
   डॉ० नगेन्द्र
   पृश्ठ सं0 :– 6 से 10
4. हिन्दी भाषा का इतिहास
   डॉ० भोलानाथ तिवारी, वाणी प्रकाशन (नयी दिल्ली)
   पृश्ठ सं0 :– 9, 16, 65, 295 और 296
5. जनसंचार और हिन्दी पत्रकारिता
   डॉ० अर्जुन तिवारी
   पृश्ठ सं0 :– 112, 128
6. प्रयोजन मूलक हिन्दी
   विदनो गोदरे
   पृश्ठ सं0 :– 71 से 75
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास
   डॉ० नगेन्द्र
   पृश्ठ सं0 :– 61 से 73, 125 से 135, 164 से 165, 186 से 190, 201 से 208, 450 से 151